IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

मोहन राकेश के नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' में स्त्री–पुरुष के संबंधों की विडंबना और एक दूसरे के अभाव की रिक्तता

दीक्षा यादव
शोधार्थी
हिन्दी विभाग
राधा गोविन्द विश्वविद्यालय,रामगढ़ (झारखंड)

''प्रत्यक्ष रूप में 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक ऐतिहासिक है लेकिन यह ऐतिहासिक कहने भर को है । असलियत में पूरा नाटक आधुनिक ही नहीं, पूरा यथार्थवादी भी है क्योंकि प्रसाद के ऐतिहासिक नाटकों से इसका रूप सर्वथा भिन्न है। '' – गिरीश रस्तोगी के शब्दानुसार

शोध–सारांश

'आषाढ़ का एक दिन' रस और आनंद का परम्परित नाटक नहीं वरन द्वंद और त्रासदी पर आधारित एक आधुनिक नाटक है। इस बुनियादी अंतर को न समझने के कारण ही अधिकांश समीक्षक अनजाने और अनचाहे इस नाटक और मल्लिका के चरित्र के प्रति अन्याय कर जाते हैं। नाटक का द्वंद, तनाव और संघर्ष ,भावना, व्यक्ति, स्थिति तथा प्रकृति –सभी स्तरो पर विद्यमान है । रूमानियत और यथार्थ, भावना और कर्म, समय और इच्छा, प्रेम और विवाह, परिवेश और सृजनात्मकता, व्यक्तिगत स्वातंत्र्य और राज्याश्रय – 'आषाढ़ का एक दिन' में व्याप्त संघर्ष के विविध आयाम हैं। यह नाटक बाहरी क्रियाओं और संघर्ष के बजाय अधिकतर भीतरी प्रतिक्रियाओं और द्वंद के द्वारा तनाव की सृष्टि करता है। तलवारों की लड़ाई की अपेक्षा यह नाटक विरोधी भावनाओं, मनोवृतिओं और इरादों के संघर्ष को प्रायः वाक युद्ध के रूप में प्रकट करता है। इस नाटक के प्रकाशित होते ही कई तरह के विवाद उठ खड़े हुए उसकी ऐतिहासिक प्रमाणिकता को लेकर, रंगमंचीय संभावनाओं को लेकर और सबसे अधिक कालिदास के चरित्र को लेकर।

मुख्य शब्द : – स्त्री पुरुष संबंध, संबंधों की विडंबना, संबंधों में अभाव के रिक्तता, यथार्थ और आशा –आकांक्षा का द्वंद

प्रस्तावना :–

मोहन राकेश ने कालिदास के समग्र जीवन को प्रस्तुत नए करके उसके जीवन के कुछ अंतरंग प्रसंगों को ही चुना है। स्त्री–पुरुष संबंधों की विडंबना को अलग–अलग स्तरों पर पकड़ने के प्रयत्न में सफलता मिली है। मल्लिका का यौवनागम का मधुर अनुभव और अंबिका का निष्ठुर यथार्थ – नाटक में यह विरोधी रंग जीवन की कविता को रस्ते दिखाई पड़ते हैं । इस कविता के बीज से नाटक प्रारंभ होकर उन स्थितियों तक पहुंचता है जहां व्यवहारिक जीवन के स्वप्न,यथार्थ और आशा –आकांक्षा का द्वंद मुखर उठता है । मल्लिका के भाव कोष्ठ मे कालिदास ही है लेकिन अभाव के कोष्ठ में अनेक आकृतियां आ गई है। अंत में 'इच्छा के साथ समय का द्वंद' मुख्य हो उठता है सारी पृष्ठभूमि और उसके बीच सिसकती हुई मल्लिका, टूटते हुए कालिदास और व्यंग्य में हंसते हुए विलोम का वार्तालाप अत्यंत नाटकीय त्रासद है। इस प्रकार संपूर्ण नाटक की कथावस्तु का संयोजन संघर्ष और द्वंद के आधार पर हुआ है। यह संघर्ष मल्लिका –अंबिका, अंबिका –कालिदास ,कालिदास– विलोम, विलोम –मल्लिका, मातुल– कालिदास, मल्लिका– प्रियगुजमंजरी के कई स्तरों पर उद्घाटित हुआ है और समन्वित रूप में मानव नियति का संघर्ष मात्र बनकर प्रकट होता है।

'आषाढ़ का एक दिन' में स्त्री–पुरुष के संबंधों की विडंबना और एक दूसरे के अभाव की रिक्तता

'आषाढ़ का एक दिन' कवि कालिदास के जीवन से संबंधित नाटक हैं लेकिन नाटक कालिदास के कवि रूप में प्रसिद्ध होने के बाद उतना नहीं है जितना एक बनते हुए कवि और प्रसिद्धि के चरम शिखर पर पहुंचने वाले कवि का है। जिसमें राकेश का ध्यान अधिक केन्द्रित हुआ है उसकी प्रेयसी मल्लिका पर। कालिदास के रचनात्मक व्यक्तिव की मूल प्रेरणा यही मल्लिका है, उस पूरे परिवेश का वह जीवन तत्व है वह कश्मीर का शासक बन कर चला तो लेकिन अधिकार सम्मान सब कुछ मिलने पर भी वह सुखी नहीं हो पाता बल्कि अपने को खंडित को टूटा हुआ पाता है[1] और कालिदास मल्लिका और अपनी भूमि को छोड़कर जाना नहीं चाहता–'' यहां से जाकर मैं अपनी भूमि से उखड़ जाऊंगा ''[2] मल्लिका कालिदास को राज दरबार का सम्मान स्वीकार ने के लिए प्रोत्साहित और प्रेरणा देकर मनाने का प्रयास करती है उसने कालीदास से कहती है – ''मैं जानती हूं कि तुम्हारे चले जाने से मेरे अंतर को एक रिक्कता छा लेगी।[3] बाहर भी संभवतः बहुत सुना प्रतीत होगा । फिर भी मैं अपने साथ छल नहीं कर रही।....तुम्हें आज नई भूमि की आवश्यकता है, जो तुम्हारे व्यक्तिव को अधिक पूर्ण बना दे।.... हां ! देखना मैं तुम्हारे पीछे प्रसन्न रहूंगी ,बहुत घूमूंगी और हर संध्या को जगदंबा के मंदिर में सूर्यास्त देखने जाया करूंगी....। नहीं ! विदा तुम्हें नहीं दूंगी । जा रहे हो , इसलिए केवल प्रार्थना करूंगी कि तुम्हारा पथ प्रशस्त हो।''[4] मल्लिका समर्पण की भावना से मुक्त एक लड़की है जो 'भावना में एक भावना' का वरण करने वाली, अनश्वर और पवित्र भावना से प्रेम करने वाली स्त्री है।'स्त्री–पुरुष संबंधों की दृष्टि से कालिदास से अपने संबंध को और सब संबंधों से बड़ा मानती है। जीवन में उसकी एक इच्छा है कि वह एक दिन कालिदास एक महान कवि के रूप में प्रतिष्ठित हो। कालिदास की महानता के लिए वह सब कुछ समर्पित कर देती है।

उज्जयिनी में रहकर कालिदास ने तो यथास्थिति को स्वीकार कर पाता है और न नकार पाता है जो भी घटित हो उसका अर्थ अपने मन के अनुकूल लगाकर संतोष पाने की इच्छा तथा प्रयत्न वह करता रहता है। वह अपने को राजकीय वैभव के नए वातावरण के अनुकूल स्थापित करने का प्रयत्न करता है। अपने इन प्रयास में परिस्थिति के वश में पडकर राजदूहिता प्रियमगुमजरी के साथ विवाह भी करता है ।लेकिन वह अपने को उस नए परिवेश में नितांत अकेला पाता है।[5]

उज्जयिनी का वर्तमान कालिदास के प्रकृति के प्रतिकूल सिद्ध होता है उसकी सृजनात्मक प्रतिभा राज कर्तव्य और साहित्यिक अपेक्षाओं से उत्पन्न विषमताओं से पीड़ित होकर अंतर्द्वंद का अनुभव करते हैं। इस द्वंद से मुक्त होने के लिए वह अपने निजी वातावरण में लौट आना चाहता है लेकिन निर्मम यथार्थ उसे ऐसा करने नहीं देता।[6]

शासन कार्य संभालने के लिए कश्मीर जाते हुए कालिदास अपने ग्राम प्रांतर आता है लेकिन वह मल्लिका से मिलने नहीं आता। वह तो अपने अस्थिर मन की रक्षा हेतु वहां से चला जाता है। तभी मल्लिका के दिल की बेचैनी को भांपकर मां अंबिका कहती है–'' अभी रोती हो? उसके लिए? उस व्यक्ति के लिए जिसने.....?''[7]

शासनाधिकारी होने के पश्चात जब कालिदास गांव में आया तो मल्लिका से नहीं मिला, ''मैं तब तुमसे मिलने नहीं आया, क्योंकि भय था तुम्हारी आंखें मेरे अस्थिर मन को अस्थिर कर देंगी। मैं इससे बचना चाहता था। उसका कुछ भी परिणाम हो सकता था। मैं जानता था तुम पर उसकी क्या प्रतिक्रिया होगी, दूसरे तुमसे क्या कहेंगे। फिर भी उस संबंध में निश्चित था कि तुम्हारे मन में कोई वैसा भाव नहीं आएगा और मैं यह आशा लिए हुए चला गया कि कल ऐसा आएगा जब मैं तुमसे यह सब कह सकूंगा और तुम्हें अपने मन के द्वंद का विश्वास दिला सकूंगा। यह नहीं सोचा कि द्वंद एक ही व्यक्ति तक सीमित नहीं होता, परिवर्तन एक दिशा में व्याप्त नहीं करता। इसलिए आज यहां आकर बहुत व्यर्थता का बोध हो रहा है।[8]

पुरुष स्त्री संबंधों की यह भी एक विडंबना है कि मल्लिका जीवन भर जिसे चाहती रही वहीं उसका नहीं हो सका। वह विलोम और कालिदास दोनों के बीच जीती रही। वह किसी की पत्नी भी है और प्रेयसी भी।

इस दुविधाजनक स्थिति का चित्रण करते हुए डॉक्टर गोविंद चातक ने लिखा है, ''कि इस प्रकार दो पुरुषों के बीच मल्लिका चीन संबंधों को जीती है उनमें प्रेम और घृणा आतम दान और आतम ग्रह समर्पण और विद्रोह का अद्भुत समन्वय है, किंतु इस पर भी उसका प्रेम भरा पूरा लगता है और विसंगति के बावजूद भी उपलब्धि और उदारता का अपूर्व एहसास दिलाता है।[9] प्रेम के त्रिकोण के इस नाटक में दो पुरुष और एक नारी है। यह पुरुष पात्र हैं कालिदास और विलोम और स्त्री पात्र है। मल्लिका चूंकि एक बुद्धिमान और कोमल भावनाओं की स्त्री है, वह जानती है कि विलोम कहां सबल है और कालिदास कहां निर्बल है। इसलिए वह बड़ी चौकन्नी रहती है कि दोनों का सामना ना हो पाए और जब भी कभी यह दोनों मिल जाते हैं तो मल्लिका की चिंताओं की रेखाएं और अधिक गहरी हो जाती हैं पर होता है वही जो आशंका मल्लिका को रहती है। नियति की विडंबना वश अंततः मल्लिका का शरीर विलोम को प्राप्त हुआ और ख्याति कालिदास को।[10]

मल्लिका अपने अंदर की भावना व्यक्त करते हुए कहती है मैं यदि भी तुम्हारे जीवन में नहीं रही परंतु तुम मेरे जीवन में सदा बने रहे हो मैंने कभी तुम्हें अपने से दूर नहीं होने दिया तुम रचना करते रहे और मैं समझती रही कि मैं सार्थक हूं मेरे जीवन की भी कुछ उपलब्धि है और आज तुम मेरे जीवन को एक इस तरह निरर्थक कर दोगे।

कालिदास कभी विवाह न करने का विचार रखते हुए राजदूहिता प्रियंगुमंजरी के साथ विवाह संबंध जोड़ता ह। अपने दांपत्य जीवन में भी वह द्वेत व्यक्तित्व के साथ आचरण करता है। राज वैभव तथा पत्नी प्रियंगु मंजरी के सहवास में भी वह सुखी नहीं होता। क्योंकि प्रेमिका मल्लिका की याद उसे तड़पाती रहती है। अपनी इसी अपराध भावना के कारण ही वह मल्लिका के सामने जाने से कतराता रहता है। डा.टी.आर. पाटिल के शब्दों में–''कालिदास का प्रेम एक और है और विवाह दूसरी ओर हैय मन एक ओर है और शरीर दूसरी ओर; स्पंदन एक और है और बंधन दूसरी ओरय एक और उसका सर्जन है और दूसरी ओर शासकीय प्रलोभन है इसी विचित्र द्वंद द्वारा उसका व्यक्तित्व खंडित हो जाता है।[11]

कालिदास राजाधिकारी का रूप छोड़कर कवि के रूप में जीने का निर्णय लेता है इसी निर्णय के साथ राज्य सत्ता के प्रति अपना जो मोह है उसका दमन करता है। एक कवि के रूप में जीने की इच्छा के साथ वह मल्लिका के पास लौट आता है मल्लिका के साथ नई जिंदगी शुरू करने की इच्छा भी वह प्रकट करता है लेकिन जब उसे पता चलता है कि मल्लिका एक बच्चे की मां बन चुकी है तब गहरे आंतरिक संघर्ष में पड़ जाता है इच्छा और समय के साथ के द्वंद में पढ़कर उसकी बौद्धिक चेतना यह स्वीकार करने को विवश हो जाती है। इस समय ही अधिक शक्तिशाली है, क्योंकि वह किसी की प्रतीक्षा नहीं करता अंत में समय के हाथों पराजित होकर उसे अपनी इच्छाओं का दमन करना पड़ता ह। आत्मबल और इच्छाशक्ति के अभाव में गंतव्य का ठीक दिशा बोध न होने के कारण उसके मन में अंतर्द्वंद भिड़ जाता है। इस ऐसी मनोदशा में अपने दोनों को झेलते हुए मल्लिका को छोड़कर वह किसी निश्चित दिशा की ओर चला जाता है।[12]

कश्मीर जाते हुए जब कालिदास मल्लिका से मिलने नहीं आता। इससे मल्लिका के मन को चोट पहुंचती है और अंबिका, मल्लिका की चिंता में एक दिन मृत्यु को प्राप्त कर लेती है। कालिदास का उपेक्षित व्यवहार एवं मां की मृत्यु दोनों घटनाएं मल्लिका को पूर्णत अंतर और बाह्य रूप से तोड डालती हैं। ऐसे ही कठिन अवस्था में उसे 'विलोम' से सहारा मिलता है परंतु उसका जो भाव कालिदास के साथ रहा है, वह विलोम के साथ नहीं केवल परिस्थिति की मार से वह विवश होकर कालिदास के अभाव की पूर्तिता के लिए विलोम के साथ जुड़ जाती है। क्योंकि समाज के ही अकेली और युवा नारी को ठीक से जीवन जीने नहीं देता अकेली नारी का जीवन जीना दूभर करता है। मल्लिका को भी बाह्य रूप में ही क्यों न हो विलोम के सहारे की आवश्यकता रहती है। इसलिए वह कालिदास का अभाव को विलोम से पूरा करती है।[13]

कालिदास की सन्यास वार्ता सुनकर उसे अपना जीवन व्यर्थ लगता है। क्योंकि जिसके लिए और जिसके पीछे अपना जीवन होम करती है वही अपने मार्ग से पलायन करता है। अतः उसके आत्मकथन में उसकी पीड़ा इस प्रकार प्रकट हो जाती है। मैं यद्यपि तुम्हारे जीवन में नहीं रही, परंतु तुम मेरे जीवन में सदा बने रहे हो। मैंने कभी तुम्हें अपनो से दूर नहीं होने दिया। तुम रचना करते रहे और मैं समझती रही कि मैं सार्थक हूं, मेरे जीवन की यही कुछ उपलब्धि है। आज तुम मेरे जीवन को इस तरह निरर्थक कर दोगे? मैं टूट कर भी अनुभव करती रही कि तुम बन रहे हो। क्योंकि मैं अपने को अपने में ने देखकर तुम्हें देखती थी और आज यह सुन रही हूं कि तुम सब छोड़कर सन्यास ले रहे हो? तटस्थ हो रहे हो उदासीन मुझे मेरी सत्ता के बोध से इस तरह वंचित कर दोगे?[14] मल्लिका के इस आत्मकथन के दौरान ही कालिदास वहां आ जाता है और मल्लिका से शेष जीवन को फिर से अथ से आरंभ करने की बात करता है।

निष्कर्ष रूप में यही कहा जा सकता है कि मोहन राकेश के नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' में स्त्री–पुरुष के संबंधों की विडंबना और एक दूसरे के अभाव की रिक्तता पोस्ट दिखाई देती है क्योंकि कालिदास और मल्लिका एक दूसरे के अभाव में आत्म निर्वासन और प्राय 1:00 के बाद में टूटे हुए और जर्जर हैं कालिदास और मल्लिका की निकटता दूरियों में परिवर्तित हो गई है। मल्लिका के घर में कालिदास की उपस्थिति केवल एक मेहमान के तौर पर मैं तो रखती है। कालिदास मल्लिका घर में अनाधिकार चेष्टा कर प्रवेश पाने वाले एक यात्री की तरह अनुभव करता है दोनों एक दूसरे के अभाव में छठपटाने की प्रक्रिया से गुजरते हैं। कालिदास के जीवन में मल्लिका नहीं रही लेकिन उसके मन में कालिदास के लिए एक मधुर भावना है जो विलोम की पत्नी और मां बनने पर अलग नहीं हो पाती।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ. पांडव कुमार, मोहन राकेश के नाटकों में मानवीय सम्बन्धों का विश्लेषण : जानकी प्रकाशन, पटना/दिल्ली, 2015, पृ. 63
2. मोहन राकेश, 'आषाढ़ का एक दिन', राजपाल एंड संस, कश्मीरी गेट, नई दिल्ली (1996) पृ. 10
3. नेमिचन्द्र जैन, मोहन राकेश के सम्पूर्ण नाटक, राजपाल एंड संस, दिल्ली(1993) पृ. 55
4. मोहन राकेश, 'आषाढ़ का एक दिन', राजपाल एंड संस, कश्मीरी गेट, नई दिल्ली (1996) पृ. 47
5. टी.साबु : मोहन राकेश के नाटकों के पात्र : मनोवैज्ञानिक सम्बन्ध, जवाहर पुस्तकालय, हिन्दी पुस्तक प्रकाशक एवं वितरक, मथुरा (2015) पृ. 116
6. टी.साबु : मोहन राकेश के नाटकों के पात्र : मनोवैज्ञानिक सम्बन्ध, जवाहर पुस्तकालय, हिन्दी पुस्तक प्रकाशक एवं वितरक, मथुरा (2015) पृ. 119
7. नेमिचन्द्र जैन, मोहन राकेश के सम्पूर्ण नाटक, राजपाल एंड संस, दिल्ली(1993) पृ. 85
8. मोहन राकेश, 'आषाढ़ का एक दिन', राजपाल एंड संस, कश्मीरी गेट, नई दिल्ली (1996) पृ. सं. 101–102
9. डॉ. गोविन्द चातक, आधुनिक नाटक का मसीहाः मोहन राकेश, पृ. 54
10. नरेन्द्र त्रिपाठी : हिन्दी नाटक बदलते आयाम, पृ. 91
11. डॉ. टी.आर. पाटिल, समसामयिक हिन्दी नाटकों में खंडित व्यक्तित्व अंकन, पृ. 51
12. टी.साबु : मोहन राकेश के नाटकों के पात्र : मनोवैज्ञानिक सम्बन्ध, जवाहर पुस्तकालय, हिन्दी पुस्तक प्रकाशक एवं वितरक, मथुरा (2015) पृ. 121
13. डॉ. प्रतिभा येरेकर, मोहन राकेश के नाटकों में नारी, विकास प्रकाशन, कानपुर (2009) पृ. 52
14. मोहन राकेश, आषाढ़ का एक दिन, पृ.सं. 93–94